हिंदी के पहले जासूसी कथाकार

गोपाल राम गहमरी के संस्मरण

संपादक:

संजय कृष्ण

हिंदी के पहले जासूसी कथाकार

गोपालराम गहमरी के संस्मरण

संपादक

संजय कृष्ण

कुछ अपनी ओर से

महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने लिखा है कि 'स्वर्गीय गोपालराम गहमरी हिंदी के पिछले 50 साल के विकास के जीवित इतिहास थे। उसके विकसित होते गद्य को उन्होंने केवल साक्षीरूप नहीं देखा, बल्कि उसके निर्माण में सक्रिय भाग लिया। एक समय था जबकि उनका 'जासूस' हजारों पाठकों के लिए मनोरंजन की आकर्षक सामग्री प्रति मास प्रस्तुत करता था। वहाँ बड़ी भारी संख्या में लोगों ने 'जासूस' द्वारा हिंदी सीखी। जब स्वर्गीय गहमरी जी ने लिखना शुरू किया तो मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई और मैं बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा करता रहा कि इस तरह हिंदी के विकास का एक मनोरंजक और प्रामाणिक अभिलेख हमारी आने वाली पीढ़ियों के लिए तैयार हो जाएगा। शोक है कि गहमरी जी अपने इस कार्य को पूरा न कर सके। लेकिन पूर्ण या अपूर्ण जो भी उन्होंने लिखा है उसको एकत्रित छपाकर सुरक्षित कर देना हमारा कर्तव्य है। हमें आशा है कि गहमरी जी के इन संस्मरणों को लोग ध्यान से पढ़ेंगे।'

दरअसल, गहमरी जी के निधन (20 जून, 1946) के चार साल बाद फरवरी-मार्च 1950 में 'हैहय क्षत्रिय मित्र' ने उन पर एक विशेषांक निकाला था। 64 पेज के इस अंक में गहमरी जी के कुछ संस्मरण एवं कुछ उनके जीवन में घटित कहानियों को शामिल किया था। अंक पर ही अपनी शुभकामनाएं देते हुए राहुल सांकृत्यायन ने उपर्युक्त दो शब्द लिखे थे। गहमरी जी को गए आज 69 साल हो गए लेकिन हिंदी साहित्य में इनकी चर्चा नहीं होती है। अपने देश के हिंदी विभाग भी कुंजी पर निर्भर हो गए हैं और अपवाद छोड़ दें तो प्राध्यापक भी कुंजी से ही आ रहे हैं, इसलिए वहाँ शोध के नाम पर खिलवाड़ होना स्वाभाविक है।

कहते हैं कि रचनाकार कभी मरता नहीं। कुछ समय के लिए वह ओझल जरूर हो जाता है। खुशी है कि गहमरी जी एक बार फिर अपने संस्मरणों के जरिए ही 'जीवित' होने जा रहे हैं। हम सब जानते हैं कि उन्होंने ढेर सारे जासूसी उपन्यास लिखे। सच्ची घटनाओं पर कहानियाँ लिखीं। कई पत्रिकाओं का संपादन किया। एक युग नायक की तरह काम किया। पर उनके काम का हमने उचित और सही परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन कतई नहीं किया। हमारे दिमाग में यह बात बिठा दी गई कि वे महज जासूसी उपन्यासकार थे। बस! जबकि जासूसी लेखन के अलावा

भी बहुत कुछ रचा। इन सब बातों का खुलासा उनके संस्मरणों से होता है। इन संस्मरणों में हिंदी का एक अलग साहित्य का इतिहास मौजूद है। उनके संस्मरणों को देखें तो कई दुर्लभ चीजें मिलती हैं। संभवत: वह ऐसे पहले लेखक थे, जिन्होंने भारतेंदु के बलिया में नाटक मंचन को देखा और लिखा, उस कार्यक्रम पर भी समीक्षात्मक नजर डाली। बाद में 1927 में हरिद्वार कुंभ के दौरान भी उन्होंने एक मजेदार रिपोर्ट लिखी। इसमें भी उन्होंने नाटकों की समीक्षा की। अपने 'रंग दस्तावेज' में महेश आनंद ने भी लिखा है कि 'गोपाल राम गहमरी ने अपने संस्मरण में कुंभ मेले के समय राधेश्याम कथावाचक रचित कृष्णावतार के प्रदर्शन के बहाने 1885 में मंचित भारतेंदु के नाटक सत्य हरिश्चंद्र का उल्लेख किया है। एक संवेदनशील कथाकार-नाटककार का यह रोचक संस्मरण नाटक लेखन और उसकी प्रस्तुति-दोनों पक्षों को समेटता हुआ तत्कालीन रंगकर्म से साक्षात्कार कराता है। छोटी-छोटी टिप्पणियों के रूप में बिखरी हुई इस प्रकार की प्रामाणिक सामग्री हिंदी रंग परिवेश के महत्वपूर्ण सूत्रों के परिचय में सहायक है। इसीलिए गहमरी का यह रंगानुभव हिंदी रंगमंच के इतिहास को समझने के लिए अनिवार्य दस्तावेज है।' इस टिप्पणी से हम गहमरीजी के अवदान को समझ सकते हैं। हालांकि उनके अन्य संस्मरण भी ऐसे ही दस्तावेजी और इतिहास के एक कालखंड को समझने में सहायक हैं।

उत्तरप्रदेश के पिछड़े जिले गाजीपुर के एक गांव बारा कलां में सन् 1866 को जन्मे गहमरीजी ने रवींद्रनाथ टैगोर के काव्य नाटक 'चित्रांगदा' का सबसे पहले हिंदी अनुवाद 1895 में किया था। खड़ी बोली को खड़ा करने में भी अपने तई काम किया। उनकी हिंदी सेवाओं की सराहना पं. रामचन्द्र शुक्ल ने हिंदी साहित्य के इतिहास में मुक्त कंठ से की है 'गहमरी जी का मुख्य व्यवसाय साहित्य सेवा ही था। वे सरल और सुबोध हिंदी के हिमायती थे। सर्व साधारण को समझ आने वाली हिंदी लिखी।' हालांकि उनका भाषा ज्ञान जबरदस्त था। अरबी, फारसी, संस्कृत, अवधी, ब्रज के शब्द उनकी रचनाओं में मिलते हैं। बांग्ला के वे जानकार थे और बांग्ला से खूब अनुवाद भी किया। संपादन कला में भी वे दक्ष थे और आधा दर्जन पत्र-पत्रिकाओं का संपादन किया।

इस पुस्तक में उनके जो संस्मरण प्रकाशित किए जा रहे हैं, अधिकांशत: फरवरी-मार्च 1950 में 'हैहय क्षत्रिय मित्र' से साभार लिए गए हैं। इस अंक को प्रकाशित करते हुए संपादकीय में कहा गया था कि जो शेष है, उसे अगले अंक में प्रकाशित किया जाएगा, हालांकि अगला अंक प्रकाशित हुआ या नहीं, इसकी जानकारी नहीं

है। बनारस से लेकर राँची तक के पुस्तकालयों में उसे खोजने की काफी चेष्टा की, लेकिन सुलभ नहीं हो सका। कुछ संस्मरण 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित हुए थे, वहाँ से भी लिए गए हैं। कुछ संस्मरण 'बालक' पत्रिका में। 'बालक' के अंक राँची के संतुलाल पुस्तकालय में मिले। यहाँ बालक के पुराने अंक ऐसे ही पलट रहा था कि अचानक गोपालराम गहमरी का दुर्लभ संस्मरण हाथ लग गया, 'मेरा बचपन।' इसी तरह सरस्वती में बालमुकुंद गुप्त पर भी एक संस्मरण मिला। प्रेमचंद संपादित 'हंस' के आत्मकथा अंक में भी उनका एक संस्मरण प्रकाशित हुआ था, उसे भी यहाँ शामिल किया गया है। 2001 में पद्मश्री डॉ कपिलदेव द्विवेदी व सत्यनारायण सिंह 'नंदाजी' गहमरी के संपादन में 'गहमर गौरव' नामक एक पुस्तक निकली तो उसमें एक खंड गहमरी जी पर था। इस अंक में भी जो संस्मरण प्रकाशित हुए थे वह 'हैहय क्षत्रिय मित्र' से ही लिए गए थे। मित्र का अंक भी डॉ. कपिलदेव द्विवेदी व नंदाजी ने ही उपलब्ध कराया। पिछले 16-17 सालों से उनकी रचनाओं को खोजने का क्रम चल रहा है।

हिंदी में पुस्तकाकार उनके संस्मरण पहली बार प्रकाशित हो रहे हैं। उनकी ढेर सारी रचनाएं यहाँ-वहाँ पुस्तकालयों में बिखरी हुई हैं। मंडला, प्रतापगढ़, बंबई से लेकर न जाने कहीं-कहीं तक। इन्हें खोजना किसी एक व्यक्ति के बस की बात नहीं। फिर भी, जितना संभव हो सका, वह आपके सामने है। खोज जारी है। उनके इन संस्मरणों में हम हिंदी साहित्य के एक बड़े कालखंड से परिचत तो होते ही हैं, उस दौर की प्रवृत्तियों, परंपराओं और बहसों के बारे में भी ढेर सारी जानकारियाँ हासिल करते हैं, इसलिए ये संस्मरण मूल्यवान हैं। गहमरीजी ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से लेकर हिंदी सेवी और 'हिन्दोस्थान' पत्रिका के स्वामी प्रतापगढ़, कालाकांकर के राजा रामपाल सिंह, प्रताप नारायण मिश्र, बालमुकुंद गुप्त और कुछ पत्रिकाओं के बारे में अपने संस्मरण लिखे हैं, जिनका उन्होंने संपादन किया था। इन सभी को इसमें शामिल किया गया है। कुछ संस्मरणों में घटनाओं का दुहराव भी मिल सकता है। मैंने उन्हें वैसे ही मूल रूप में जाने दिया, क्योंकि अलग-अलग समय में लिखे होने के कारण कुछ संस्मरणों में एक ही बात आ गई है, लेकिन कुछ-कुछ नई जानकारी भी मिलती है। इसलिए, दुहराव में भी एक आनंद है। कुछ संस्मरणों में आप देखेंगे कि कैसे उनके भीतर कहानियाँ जन्म लेती थीं। उनकी ढेरों रचनाएं कल्पनाजनित न होकर हकीकत रही हैं। सही घटनाओं पर आधारित। आपबीती भी। खुद उनके साथ भी कुछ ऐसी घटनाएं घटीं और उनपर उन्होंने कहानियाँ लिख डालीं। बहरहाल, इन संस्मरणों से गुजरेंगे तो खुद ही उनके

महत्व को समझेंगे। यहाँ कई ढंग के संस्मरण संकलित हैं। कुछ व्यक्तित्व पर, कुछ घटनाओं पर, कुछ खड़ी बोली हिंदी को लेकर चली बहसों पर, जहां उन्होंने अपना रुख साफ किया है। कुछ आत्मगत भी। हां, भाषा को जस का तस रखा गया है।

गहमर निवासी नंदाजी ने अपने गाँव के ही साहित्यिक रुचि संपन्न सर्वश्री बालमुकुंद सिंह, दामोदर सिंह, योगेंद्रनाथ सिंह आदि के सहयोग से 'गोपालराम गहमरी सेवा संस्थान' की नींव डाली है। एक पुस्तकालय भी वहाँ है, जहां कुछ पुस्तकें भी हैं। ये लोग भी गहमरीजी की रचनाओं को एकत्रित कर रहे हैं ताकि पाठकों को आसानी से सुलभ हो सकें। इन लोगों का स्नेह मुझ अकिंचन को भी मिलता रहा है।

इन लोगों के प्रति आभार व्यक्त कर उऋण नहीं होना चाहता। महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, काशी में पढ़ाई के दौरान नागरी प्रचारिणी सभा के आर्य पुस्तकालय, बनारस का भी उपयोग किया। जब-तब आज भी उस खजाने से कुछ मोती निकाल लाता हूं। वहाँ के पदाधिकारियों, पुस्तकालय कर्मचारियों का भी स्नेह मिलता रहा। संतुलाल पुस्तकालय, राँची के एन.के. मिश्राजी के प्रति हार्दिक आभार, जिन्होंने हर संभव मदद की और पूरा पुस्तकालय ही खोल दिया। प्राचीन पुस्तकों-पत्रिकाओं का यहाँ खजाना है। सुधीर लाल ने इसमें मेरी मदद की। जमानियाँ के अपने अग्रजों सर्वश्री डॉ. सरजू तिवारी, डॉ. पीएन सिंह, ओम धीरज, शंभुनाथ राय, कुमार शैलेंद्र, वीरेंद्र सारंग, डॉ. मदन गोपाल सिन्हा, राजेंद्र सिंह, सुरेश राय को भूलना मुश्किल है। राँची के सर्वश्री प्रो. अरुण कुमार, प्रो. गिरिधारी राम गौंझू, अश्विनी कुमार पंकज, रणेंद्र, पंकज मित्र, शहरोज का संग-साथ काफी ऊर्जा प्रदान करता है। छोटे भाई अनिल अनुज व बेटे हिमांशु ने काफी परिश्रम से इन संस्मरणों को टाइप कर मेरा बहुत सा समय बचाया। यह सब लिखते हुए हम सबके अग्रज स्व. हरिवंश पाठक 'गुमनाम' की बहुत याद आ रही है। विकल्प प्रकाशन, दिल्ली के भाई पवन श्रीवास्तव ने भी इस अमूल्य खजाने को प्रकाशित करने में रुचि और साहस दिखाया, उनके प्रति भी आभार।

संजय कृष्ण

वसंत पंचमी

24 जनवरी, 2015

अनुक्रम

कुछ अपनी ओर से	2
मेरा बचपन	8
मेरे संस्मरण	12
साहित्यिक संस्मरण	20
सत्य संस्मरण	24
भाषा भूषण का संपादन	32
भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का भाषण	36
नृपाल राजा रामपाल सिंह	42
साहित्य राजा रामपाल सिंह	47
पंडित प्रताप नारायण मिश्र	51
बाल मुकुन्द गुप्त	60
संस्मरण प्रस्ताव	66
हिंदी की चिन्दी	69
लोकमान्य तिलक की गिरफ्तारी	71
जालिफ से परिचय	75
लार्ड हार्डिंज	77
आँखों देखी घटना	82
जासूस से मुलाकात	88
बहराम की गिरफ्तारी	91

बहराम बन्दीखाने में 101

भयंकर डाकू से मुठभेड़ 111

कुंभ यात्रा 121

परिशिष्ट

श्रीयुत गोपालराम गहमरी 125

मेरा बचपन

मैं गहमर' के मदरसे में जब 1871 में पढ़ने बैठा था, उस समय मैं पाँच वर्ष का था। उन दिनों स्कूल का नाम कोई नहीं लेता था, मदरसा ही सब लोग समझते थे। मदरसे के हेडमास्टर थे बाबू रामनारायण सिंह, नीचे के मास्टर थे मुंशी योगेश्वर प्रसाद और सबसे नीचे के मास्टर काली प्रसाद श्रीवास्तव।

मुंशी काली प्रसाद 'गहमर' में लड़कों को बुलाकर मदरसे में पहुँचाने और अक्षर-परिचय कराने का काम करते थे। उनको वेतन यही मिलता था कि जितने लड़के पढ़ने आते थे, अपने कलेवे के लिये लाये हुए चबेने में से चुंगी की तरह कुछ दे देते थे। सैकड़ों लड़कों के चबेने की चुंगी से मुंशी कालीजी का झोला भर उठता था। दस पंद्रह सेर चबेना ही कालीजी का पर्याप्त धन था-कुछ मासिक भी लड़कों से मिल जाता था।

अक्षर-परिचय और वर्णमाला पढ़ने के बाद हमलोग 'बालबोध' पढ़ते थे। दोनों पुस्तकें श्रीराजा शिवप्रसाद सितारे-हिंद की बनाई हुई थीं। इनको पड़ लेने पर तीसरी पुस्तक विद्यांकुर पढ़ाई जाती थी। मैं पाँचवें दरजे में पढ़ रहा था।

पाँचवें दरजे को मुंशी योगेश्वरप्रसादजी पढ़ाते थे। अक्षर-परिचय वाले छात्र जमीन पर टाट बिछाकर पढ़ते थे। पढ़ने वाले छात्रों की ड्यूटी, पढ़ने के सिवा, रोज टाट झाड़ना और बिछाना था-शनिवार को गोबर बटोरकर मदरसे की दालान और आंगन लीपना भी था।

काली प्रसाद को हमलोग गुरुजी और बाकी दो मास्टरों को बड़का मुंशीजी और छोटका मुंशीजी कहते थे। छोटे-छोटे पाँच वर्ष से दस-बारह वर्ष तक के लड़के पढ़ने आते थे। गुरुजी (मुंशी काली प्रसाद) बड़े हँसोड़ थे। जब लड़के आपस में मार-पीट करते तब कमजोर छात्र वहीं रोने लगता था। तीसरा लड़का चिल्लाकर कहता-'गुरुजी, लड़का रोता है।' गुरुजी वहीं से कहते-लड़का रोता है तो पिला दो।'

गुरुजी लड़कों को बहुत प्यार करते थे। रोते लड़कों को चुप कराते, उनके आँसू पोंछते और उनकी नाक तक भी पोंछ देते थे। वे पुचकार कर पढ़ाते, घर से लिवा लाते और जाते समय सबको घर पहुँचाते थे। उनका मोह और उनका दुलार देखकर बड़ा आनंद आता था। धन्य है वह गुरु जो लड़कों को जी खोलकर प्यार करता और